www.thearyasamaj.org

ओ३म्-सुप्रभा

वैदिक सभ्यता-संस्कृति तथा राष्ट्रीय एकता की पोषक पत्रिका

ओ३म् क्रतो स्मर ।

वर्ष–7, अंक–4	दिसबर 2013	पौष
सृष्टि संवत् 1960853114	विक्रमी संवत् 2070	दयानन्दाब्द 190

आज गम्भीर भाव से यह प्रतिज्ञा करो कि–

अपनी मातृभूमि से अस्पृश्यता के कलंक का समूल नाश कर दोगे ।

–श्रद्धानन्द संन्यासी

देहली - 21.5.1925

सम्पादक

मूलचन्द गुप्त

ओम् प्रतिष्ठान, कुसुमालय, बी–1/27, रघुनगर, पंखा रोड, नई दिल्ली–110045

www.thearyasamaj.org

ओ३म्

ओ३म्-सुप्रभा

वैदिक सभ्यता-संस्कृति तथा राष्ट्रीय एकता की पोषक पत्रिका

- *परामर्श*

डॉ० धर्मपाल आर्य
(पूर्व कुलपति गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार)
ए/एच-16, शालीमार बाग,
दिल्ली-110088
दूरभाष-011-27472014
011-27471776

- *सम्पादक*

मूलचन्द गुप्त
(पूर्व प्रधान आर्यसमाज दीवानहाल दिल्ली)

- *प्रकाशक*

मूलचन्द गुप्त,
अध्यक्ष, **ओम्-प्रतिष्ठान**
कुसुमालय, बी-1/27, रघुनगर,
पंखा रोड, नई दिल्ली-110045
दूरभाष-9650886070
011-25394083

ई-मेल-Ompratisthan@gmail.com

ओ३म्-सुप्रभा में प्रकाशित लेखों के सभी विचारों से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है। वे विचार लेखक के अपने हैं।

प्रकाशक-मुद्रक-स्वामी-मूलचन्द गुप्त द्वारा सम्पादित, तथा वैदिक प्रेस, 995/51, गली नं० 17, कैलाशनगर, दिल्ली-31 (फोन-22081646) से मुद्रित कराकर, ओम् प्रतिष्ठान, कुसुमालय, बी-1/27, रघुनगर, पंखा रोड, नई दिल्ली- 45, से प्रकाशित किया। न्यायक्षेत्र-दिल्ली

उद्देश्य

- वैदिक सभ्यता, संस्कृति तथा राष्ट्रीय एकता का पोषण करना, वैदिक विचार-धारा के अनुसार मानव-निर्माण करना, समरस और समेकित समाज का संगठन करना, विश्व भर में सुख और शान्ति की स्थापना करने का प्रयास करना **ओम्-प्रतिष्ठान** का मुख्य उद्देश्य है।
- इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए समय समय पर विभिन्न बहुआयामी गतिविधियों का संचालन किया जाएगा।
- रचनात्मक और प्रेरक साहित्य का सृजन, प्रकाशन और प्रसारण का, इन गति-विधियों में प्रमुख स्थान होगा।
- इस पत्रिका में समय-समय पर आध्यात्मिक, सामाजिक, राजनैतिक, ऐतिहासिक, आर्थिक, नैतिक, वैश्विक चेतना जागृत करने से सम्बन्धित विषयों पर मौलिक लेख तथा समाचार प्रकाशित किए जायेंगे।
- **ओ३म्** परमपिता परमात्मा का निज नाम है। परमात्मा इस सृष्टि का नियन्ता है। सृष्टि से सम्बन्धित सभी विषयों का इसमें समावेश किया जाएगा।
- **ओ३म्-सुप्रभा** का प्रकाशन पूर्णतया निजी स्तर पर किया जा रहा है। उपर्युक्त उद्देश्यों की पूर्ति हेतु प्रति मास देश-विदेश के आर्य विद्वानों, लेखकों, उपदेशकों, कार्यकर्ताओं, प्रकाशकों एवं संस्थाओं को ओ३म्-सुप्रभा **निःशुल्क** भेजी जा रही है।
- लघु-पत्रिका के कारण, प्रकाशनार्थ लेख न भेजें।
- सुधी पाठकों से निवेदन है कि वे अपने सुझाव भेजकर कृतार्थ करते रहें।

www.thearyasamaj.org

ओ३म्-सुप्रभा

वैदिक सभ्यता-संस्कृति तथा राष्ट्रीय एकता की पोषक पत्रिका

रचना, स्थिति और प्रलय, कर्मों का फल जिस का विधान है ।
ओ३म् सुप्रभा ज्ञान अनुपम, सुरभित जिस से जन कुसुम प्राण है ।।

वर्ष–7, अंक–4	दिसम्बर 2013	पौष
सृष्टि संवत् 1960853114	विक्रमी संवत् 2070	दयानन्दाब्द 190

ओ३म्–महिमा

ते एतदेवरूपमभि सं विशन्त्येस्माद्रूपादुद्यन्ति

—महात्मा नारायण स्वामी

अथ यत्पञ्चमममृतंतत्साध्या उपजीवन्ति ब्रह्मणा मुखेन । न वै देवा अश्नन्ति न पिवन्त्येतदेवामृतं दृष्ट्वातृप्यन्ति ॥

त एतदेवरूपमभिसंविशन्त्येतस्माद्रूपादुद्यन्ति ॥

स य एतदेवममृतवेद साध्यानामेवैकोभूत्वा ब्रह्मणेवमुखेनैतदेवामृतं दृष्ट्वा तृप्यति स एतदेव रूपमभिसंविशत्येतस्माद्रूपादुदेति ॥

स यावदादित्य उत्तरत उदेता दक्षिणेऽस्तमेता द्विस्तावदूर्ध्वमुदेताऽर्वागस्तमेता साध्यानामेव तावदाधिपत्यं स्वाराज्यं पर्य्येता ॥

छान्दोग्य उपनिषद् 3.10.1-4

अर्थ–अनन्तर जो पांचवा अमृत है उससे साध्यगण, ब्रह्म मुख से जीते हैं । निश्चय ये देव न खाते हैं और न पीते हैं । इसी अमृत को देखकर तृप्त रहते हैं ॥

वे (साध्यगण) इसी रूप में सब ओर से प्रविष्ट होते हैं और उसी रूप से उदित होते हैं ॥

सो जो कोई इस अमृत को जानता है साध्यों ही में एक होकर ब्रह्म मुख से इसी अमृत को देखकर तृप्त होता है । वह इसी रूप में सब ओर से प्रविष्ट होता और इसी रूप से उदय होता है ॥

जितने काल सूर्य उत्तर से उदय और दक्षिण में अस्त होता रहता है । उससे दुगने काल तक ऊपर दिशा से उदय और नीचे की दिशा में अस्त होता रहेगा । उतने काल वह साध्यों के मध्य आधिपत्य और स्वराज्य पाता है ॥

www.thearyasamaj.org

ओ३म् महिमा

–स्व० पं० लोकनाथ, तर्कवाचस्पति

"ओ३म्" हमें प्राणों से प्यारा
जग जीवन सब का आधारा
"ओ३म्" सकल दुःखों को टारे
सिद्ध कर सब काज हमारे
"ओ३म्" सदा सुख रूप अनन्ता
रक्षक पालक और नियन्ता
"ओ३म्" महा महिमा को धारे
सब कुछ चलता उसके द्वारे
"ओ३म्" जग जनक अनादि देवा
मोक्ष दायिनी उस की सेवा
"ओ३म्" दुष्ट जन दण्ड विधाता
भक्तों के संताप मिटाता
"ओ३म्" सकल शुभ ज्ञान प्रकाशी
"ओ३म्" सर्वव्यापक अविनाशी

स्वामी श्रद्धानन्द

भारत के आधुनिक इतिहास में स्वामी श्रद्धानन्द जी का स्थान प्रथम सांस्कृतिक पथप्रदर्शक का है। जिनको स्वामी जी के साक्षात् दर्शन का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ, उनके लिये स्वामी जी के जीवन वृत्तान्त को पढ़ना ही मनुष्य को उन्नति के मार्ग पर अग्रसर करने वाला है।

–देशरत्न डॉ० राजेन्द्र प्रसाद

www.thearyasamaj.org

सम्पादकीय

अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द

इस मास बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी, महर्षि दयानन्द सरस्वती के अनन्य अनुयायी गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के संस्थापक स्वतंत्रता सेनानी, सुधी पत्रकार एवं लेखक, सामाजिक न्याय के लिए सतत संघर्षशील स्वामी श्रद्धानन्द का बलिदान दिवस है। स्वामी श्रद्धानन्द पूर्वनाम महात्मा मुंशीराम का जन्म पंजाब के तलवन नामक ग्राम में 22 फरवरी 1856 को हुआ। आपकी शिक्षा दीक्षा बनारस और लाहौर में हुई। आप नायब तहसीलदार बने। नौकरी छोड़कर फिल्लौर में और बाद में जालंधर में वकालत शुरू की। आपने बरेली में 1879 में महर्षि दयानन्द सरस्वती से भेंट की थी। आप उनके सिद्धान्तों और मन्तव्यों से इतने प्रभावित हुए कि आप आर्यसमाज की ओर प्रवृत्त हुए। लाहौर में बच्छोवाली आर्यसमाज के आप सदस्य बने। आपके पहले ही भाषण से तत्कालीन प्रधान लाला साईंदास बहुत प्रभावित हुए। आपने गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना की। आपने 'सद्धर्म प्रचारक' पत्र प्रारम्भ किया। आप 1917 में संन्यासी बने और दिल्ली आकर रहने लगे। आपने दलितों तथा अनाथों के कल्याण के लिए संस्थाएं बनाई। आपने 'तेज', 'अर्जुन' समाचार पत्र निकाले। आपने स्वाधीनता आन्दोलन में महात्मा गांधी के नेतृत्व में सक्रिय हो कर 1919 में रोलट एक्ट का विरोध किया। आपने जामा मस्जिद से व्याख्यान दिया। आपका जीवन त्याग और तपस्या से पूर्ण था। जलियांवाला काण्ड के बाद 1919 में कांग्रेस का महाअधिवेशन अमृतसर में हुआ। आप इसके स्वागताध्यक्ष थे। आपने अपने स्वागत भाषण में युवाशक्ति को आचारवान् बनने की प्रेरणा दी। आपने भारत वासियों को संगठित किया। आपने भारतीय शिक्षा पद्धति पर बल दिया। आपने अस्पृश्यता को समाप्त करने की बात कही। आपने दलितोद्धार सभा बनाई। आपने अनाथाश्रम, वनिता आश्रम एवं वानप्रस्थ आश्रम स्थापित किए। आप सभी के लिए समान अवसर के पक्षधर थे। आपने गोहाटी कांग्रेस अधिवेशन के समय यही अन्तिम सन्देश दिया था कि भारत का हित हिन्दू-मुस्लिम एकता में निहित है। आपने 23 दिसम्बर 1926 को एक मतांध मुस्लिम की गोलियाँ खाकर, अन्तिम सांस ली।

आपकी सत्यनिष्ठा और स्वाभिमान की भावना हम सभी के लिए प्रेरणास्पद है। हम उनके सच्चे अनुयायी बनें, सभी के साथ भ्रातृभाव रखें तथा सामाजिक कुरीतियों का उन्मूलन करें एवं उनके दिखाए मार्ग पर चलें। हमारे अन्दर एकाग्रता, आत्मविश्वास, परिश्रम, परस्पर सम्मान, सन्तोष, निष्ठा, धैर्य, कर्तव्य और समर्पण का भाव जाग्रत हो।

—सम्पादक

www.thearyasamaj.org

गुरुकुलों का संरक्षण

मैकाले प्रणीत साम्राज्यवादी शिक्षा पद्धति में निहित विनाशकारी भविष्य का अनुमान कर महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपनी अनुपम रचना 'सत्यार्थप्रकाश' में गुरुकुल शिक्षा पद्धति को एक सशक्त विकल्प के रूप में प्रस्तुत किया था। ऋषिवर के देहावसान के पश्चात् आर्यसमाज में विचार मंथन हुआ कि उनके यश और विचारों को फैलाने का एक ही मन्त्र है कि देश में विद्यालयों की स्थापना हो ।

स्वामी श्रद्धानन्द ने अपने विचारों को गुरुकुल कांगड़ी के रूप में साकार करके भारत में गुरुकुल शिक्षा पद्धति की पुनः स्थापना की । तत्पश्चात् उनकी प्रेरणा से हरियाणा में कुरुक्षेत्र, इन्द्रप्रस्थ, झज्जर आदि स्थानों पर गुरुकुल स्थापित हुए । स्वामी दर्शनान्द जी महाराज ने ज्वालापुर, वृन्दावन, विरालसी, आदि स्थानों पर गुरुकुल स्थापित किए । इन दोनों महानुभावों ने देश में ऐसा वातावरण बना दिया कि सैंकड़ों स्थानों पर गुरुकुल खुलते चले गए । कई शिक्षा संस्थाएं ऐसी भी स्थापित हुईं जिनके नाम के साथ गुरुकुल शब्द तो नहीं था लेकिन जो उसी आदर्श को लेकर चल रही थीं । जगदेव सिंह सिद्धान्ती जी का आर्य महाविद्यालय, किरठल ऐसा ही एक शिक्षा संस्थान है ।

प्रारम्भ में गुरुकुलों ने खूब नाम कमाया । गुरुकुल कांगड़ी ने तो विश्व विद्यालय तक का रूप धारण कर लिया । मुंशी प्रेमचन्द ने एक बार सुझाव दिया था कि रवीन्द्रनाथ टैगोर यदि शान्तिनिकेतन को कुछ बनाना चाहते हैं तो एक बार गुरुकुल कांगड़ी को अवश्य देख लें । गुरुकुल कांगड़ी उस काल में हिन्दी साहित्यकारों का प्रमुख मिलन स्थल था । उसके वार्षिकोत्सवों में स्वतन्त्रता आन्दोलन के नेता आमन्त्रित होते थे । एम० ए० स्तर की शिक्षा का माध्यम यदि किसी संस्था में हिन्दी था तो गुरुकुल कांगड़ी में ही था । गुरुकुल कांगड़ी ने हिन्दी जगत् को अनेक वरिष्ठ साहित्यकार, पत्रकार, डाक्टर, विद्वान् नेता दिए हैं । अन्य गुरुकुलों ने इतना यश तो अर्जित नहीं किया लेकिन इनका रिकार्ड भी ऐसा रहा कि वह अपने आप में छोटा सा इतिहास बन गया ।

नेतृत्व और प्रभुत्व की लड़ाई जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में रहती है । गुरुकुल भी इस महारोग से बच नहीं सके । जब तक आर्यसमाज में जीवन रहा, उसके सदस्यों में श्रद्धा, जागरूकता और साहस रहा तब तक यह प्रकोप कुछ दबी अवस्था में रहा, लेकिन जब से आर्यसमाज के नेतृत्व में शिथिलता आई है, अवसरवादिता बढ़ी है और जी हजूरों की बाढ़ आई है तब से गुरुकुलों पर विनाश की छाया गहराने लगी ।

www.thearyasamaj.org

परिणामस्वरूप गुरुकुल या तो बन्द हो रहे हैं, या वे हाईस्कूल आदि के रूप में बदल गए हैं, या उनकी व्यवस्था लड़खड़ाई हुई है । देश में कुछ ही गुरुकुल ऐसे रह गए हैं जिन्हें आदर्श गुरुकुल की संज्ञा दी जा सकती है लेकिन उनका भविष्य भी सुरक्षित नहीं कहा जा सकता क्योंकि वे सफलतापूर्वक केवल इसलिए चल रहे हैं कि उनका नेतृत्व उनके संस्थापकों अथवा प्रभावशाली लोगों के हाथ में है । जब यह स्थिति बदलेगी तो इन गुरुकुलों का भाग्य भी बदल जाएगा ।

गुरुकुल काल का ग्रास बनते जाना निश्चय ही चिन्ता का विषय है क्योंकि आर्यसमाज को जो प्रेरणा, शक्ति, ओज और गति मिल रही है वह उन बुद्धिजीवियों से मिल रही है जो गुरुकुल में दीक्षित हुए हैं । आज भले ही आर्यसमाज का नेतृत्व स्वयंभू नेताओं के हाथ में सिमटता जा रहा है लेकिन आर्यसमाजों को जो पुरोहित, आचार्य, धर्मोपदेशक मिल रहे हैं वे गुरुकुल की ही देन हैं । आर्य जीवन पद्धति की शिक्षा गुरुकुलों में ही मिल सकती है अन्यत्र नहीं । आर्य समाज की प्राणशक्ति के ये मूल उत्स यदि सूख गए तो आर्यसमाज अपना मूल रूप खो बैठेगा । इसमें कुछ सन्देह नहीं है ।

आर्यसमाज के सभी शुभचिन्तकों का यह नैतिक दायित्व है कि गुरुकुलों को पतन के गटर से निकालने का सार्थक प्रयास करें । स्वामी श्रद्धानन्द का बलिदान दिवस जोश-खरोश से मनाने वाले श्रद्धालुओं से हमारा आग्रह है कि वस्तु स्थिति को समझें और उस पुण्य आत्मा के लगे पेड़-पौधों को ईमानदारी से सींचें ।

गुरुकुलों को जीवन-दान यदि मिल सकता है तो केवल इस बात से मिल सकता है कि उनका संचालन एक ही प्रबंधक समिति द्वारा हो । उसका संयुक्त पाठयक्रम हो जिससे देश में गुरुकुलों की अपनी एक छवि बन सके। देश में बिखरे हुए गुरुकुल यदि एक मंच पर, एक झंडे के नीचे नहीं आएंगे तो धीरे-धीरे वे अपना स्वतन्त्र अस्तित्व खोते जायेंगे । गुरुकुलों की विश्वसनीयता स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् निरन्तर कम होती गई है और कोई समझदार व्यक्ति अपने बच्चों को वहां प्रवेश दिलाने में सहज में तैयार नहीं होता । इस विश्वसनीयता को पुनः अर्जित करने के लिए भारी संघर्ष करना होगा और यह तभी हो सकता है जब गुरुकुलों में आई अनेक कमियों को दूर किया जाए, उनका कायाकल्प हो ।

एक समय ऐसा भी था जब गुरुकुल कांगड़ी में विद्यार्थियों के प्रवेश के लिए बड़ी-बड़ी सिफारिशें पहुंचती थीं और उन्हें बेरहमी से ठुकरा दिया जाता था । हमें विश्वास है कि महर्षि दयानन्द की विचारधारा में ईमानदारी से विश्वास रखने वाले लोगों का अकाल अभी नहीं पड़ा है । ये लोग अवश्य आगे आएंगे या आर्यसमाज के वर्तमान नेतृत्व को झकझोर कर जगाएंगे । ●

["सम्राट" (मा०)-जून 1986 से साभार -संपादक]

www.thearyasamaj.org

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती के ग्रन्थों का प्रभाव

[महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती के अनन्य भक्त श्री रामलाल कपूर के पौत्र तथा श्री रूपलाल कपूर संस्थापक 'रामलाल कपूर ट्रस्ट' के पुत्र वैदिक चिन्तक तथा साधक श्री देवेन्द्र कुमार कपूर का जन्म अमृतसर में 5 फरवरी सन् 1912 में हुआ था। आप हिन्दी, संस्कृत व अंग्रेजी के विद्वान् तथा अनेक ग्रन्थों के रचनाकार थे। उन्हीं के ग्रन्थ 'वैदिक-पीयूष-धारा' की प्रस्तावना से उद्धृत ये पंक्तियां, हमारी मार्ग-दर्शक बन सकती हैं। -सम्पादक]

"इस वैदिक पीयूष-धारा के प्रकाशन में सब से पूर्व उस दयालु सविता देव की प्रेरणा है, जिसने इस श्रेष्ठ आर्य परिवार में मुझे जन्म दिया। प्रातः स्मरणीय पूज्या माता जी से मैंने एक बार विनोद में पूछा-"माता जी ! आपने क्या खाकर मुझे जन्म दिया, जो वैदिक मन्त्रों, गीता, उपनिषद् के स्वाध्याय के लिये मैं इतना लालायित रहता हूं कि कभी प्यास ही नहीं मिटती।" मुस्कराकर वे मधुर स्वर में बोलीं कि-"जब तू मेरे गर्भ में पल रहा था, तो अमृतसर में विख्यात संन्यासिनी, माई गंगा देवी जी मुझे महर्षि स्वामी दयानन्द के अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश तथा ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका पढ़ाया करती थी। वही पवित्र संस्कार तूने जन्म घुट्टी में ले लिये।" मैं सुनकर गद्-गद् हो गया! 'मातृमान् पुरुषो वेद' को सार्थक बनाने वाली मां ! तू धन्य है !! तुझे शत-शत प्रणाम करता हुआ आज तेरे ही पावन चरणों में यह हिन्दी में लिखित प्रथम पुष्प "वैदिक-पीयूष धारा" सस्नेह समर्पित करता हूं।"

24 अक्तूबर-1979 — **देवेन्द्र कुमार कपूर, मुम्बई**

दयानन्द के गीत गाओ

[आर्य जगत् में शास्त्रार्थ महारथी पण्डित रामचन्द्र जी देहलवी अद्भुत तार्किक थे। उन्होंने पौराणिक, ईसाई और मुसलमान सभी के साथ शास्त्रार्थ किये और सभी को पछाड़ा। उनके शास्त्रार्थ की एक रोचक झलकी अवलोकनार्थ प्रस्तुत है। -सम्पादक]

एक शास्त्रार्थ में मौलाना सनाउल्ला ने कहा–"पण्डित जी ! जहां आपके 'राम' समाप्त होते हैं ('म' पर) वहीं हमारे मुहम्मद साहब शुरू होते हैं, अतः अब आपको 'राम' का नाम छोड़कर मुहम्मद का जाप करना चाहिए।" देहलवी जी बोले–"शाबाश मौलाना साहब, शाबाश ! मरहबा !! परन्तु मौलाना साहब! बीच में ही रुक क्यों गये। आगे भी कहो।" मौलाना बोले –"आगे क्या है? यह आप ही कह दीजिये।" पण्डित जी बोले–"जहां आपके मुहम्मद साहब समाप्त होते हैं ('द' पर) वहां से दयानन्द शुरू हो जाते हैं। इसलिए मुहम्मद साहब को छोड़कर दयानन्द के गीत गाओ।" मौलाना ने पूछा–"दयानन्द समाप्त कहां होते हैं ?" देहलवी जी बोले–"दयानन्द तो जहां से आरम्भ होता है, वहां ही समाप्त होता है।"

www.thearyasamaj.org

लाला चतुरसेन गुप्त :
प्रजा का हितैषी और मार्गदर्शक

ऋषिर्विप्रः पुर एता जनानामृभुर्धीर उशना काव्येन ।
स चिद् विवेद यदासामपीच्यं गुह्यं नाम गोनाम् ॥

ऋग्वेद 9.89.3

सबकी हित कामना करने वाला व्यक्ति अपनी कवितामयी प्रतिभा के द्वारा, यदि निश्चयपूर्वक इन वेदज्ञान वाणियों में रक्खे-भरे हुए सुन्दर और गुह्य संकेतों को जान लेता है, तो वह ज्ञान से दीप्त और धैर्यशाली होकर, अपने को विशेष रूप से पूर्ण करके मनुष्यों का अग्रणी मार्गदर्शक बन जाता है । ऐसे व्यक्ति को ही तत्वद्रष्टा और मार्गदर्शयिता ऋषि कहते हैं ।

इस वेदमंत्र में श्रेष्ठ व्यक्ति के गुण बताये गये हैं–सबकी हितकामना करने वाला, प्रतिभासंपन्न, वेदज्ञान के गूढ़ रहस्यों एवं संकेतों को समझने वाला, ज्ञान से दीप्त, धैर्यशाली, अपने व्यक्तित्व को पूर्णत्व को प्राप्त करने वाला तथा दूसरों का मार्गदर्शक । लाला चतुरसेन गुप्त में ये सभी गुण विद्यमान थे । उन्होंने लम्बे समय तक किसी भी प्रकार की निन्दा-स्तुति की परवाह न करते हुए सार्वदेशिक प्रकाशन लि० एवं सार्वदेशिक प्रेस के संचालक के रूप में तथा 'सार्वदेशिक' के सम्पादक के रूप में आर्यसमाज की उल्लेखनीय सेवा की । लाला जी आपाद मस्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती के सिद्धान्तों के प्रति निष्ठावान, आर्यसमाज के प्रचार प्रसार में सर्वात्मना समर्पित, निर्भय, स्पष्टवादी, धीर गंभीर, धर्मप्रेमी तथा सरल प्रकृति के व्यक्ति थे । विद्यालयी शिक्षा अत्यल्प होने पर भी निरन्तर स्वाध्याय, विद्वानों के साथ सत्संग तथा नैसर्गिक तर्कशक्ति के आधार पर वैदिक वाङ्मय को अन्तर्मन की गहराई तक आत्मसात कर लिया था ।

लाला चतुरसेन गुप्त का जन्म उत्तरप्रदेश के शामली नगर में 1 नवम्बर 1906 को एक सुसम्मानित जमींदार परिवार में हुआ था । आप 1918 में दिल्ली आ गए । आप ने व्यापार की कार्य पद्धति सीखकर लाला लक्ष्मीनारायण आढ़ती की फर्म में काम किया । आर्यसमाज चावड़ी बाजार के मंत्री मास्टर शिवचरणदास की प्रेरणा से आप आर्यसमाज के सदस्य बने और स्वाध्याय तथा सत्संग के बल से वैदिक सिद्धान्तों के प्रचार प्रसार में आप लग गए । आपने साहित्य प्रकाशन का कार्य प्रारंभ किया ।

www.thearyasamaj.org

उत्साहसम्पन्नमदीर्घसूत्रं क्रियाविधिज्ञं व्यसनेष्वसक्तम् ।
शूरं कृतज्ञं दृढसौहृदं च लक्ष्मीः स्वयं गच्छतिवासहेतोः ॥

जो व्यक्ति उत्साह सम्पन्न होते हैं, शीघ्र निर्णय लेने वाले होते हैं, क्रियाविधि को जानते हैं, व्यसनों से दूर रहते हैं, बहादुर, कृतज्ञ, दृढ़निश्चयी तथा सुहृद होते हैं, ऐसे व्यक्तियों के पास लक्ष्मी खिंची चली आती है । लाला जी ने प्रकाशन व्यवसाय में बड़ा काम किया । सैकड़ों पुस्तकें प्रकाशित कीं, लिखीं, लिखवाईं तथा विक्रय की । अपने धर्म, नीति, इतिहास, महाभारत आदि ग्रंथों को लेकर आप अनेक नरेशों तथा धर्मगुरुओं से मिले । आपकी मान्यता थी कि शासक ही अच्छे-बुरे समय का कारण होता है ।

आप 1940 में पुनः शामली आ गए और वहां गुप्ता प्रेस तथा वैदिक प्रेस के माध्यम से साहित्य प्रकाशन का कार्य किया । 1951 में आप पुनः अपने मित्र लाला रामगोपाल शालवाले के आग्रह पर दिल्ली आये और सार्वदेशिक प्रकाशन व प्रेस के संचालक तथा सार्वदेशिक पत्र के संपादक का कार्यभार संभाला । आपने अनेक पुस्तकें प्रकाशित कीं । आपने अनेक संगठन बनाए । आपने कई समाचार पत्र निकाले । पर आपको धुन यही थी कि मानव मात्र का कल्याण हो । आपने कुछ पुस्तकें तो सैकड़ों, हजारों नहीं, लाखों की संख्या में प्रकाशित कराईं । वास्तव में आपके हृदय में जो काम करने की लगन थी, वह इस सारे कार्य का संचालन करती थी । कहा जाता है कि सोने की परीक्षा घिस कर, छेद कर, तपाकर तथा पीट कर की जाती है, उसी प्रकार मनुष्य की भी परीक्षा उसके त्याग, शील, गुण तथा कर्मों के आधार पर की जाती है–

यथा चतुर्भिः कनकं परीक्ष्यते निघर्षणच्छेदन ताप ताडनैः ।
तथा चतुर्भि पुरुषः परीक्ष्यते त्यागेन शीलेन गुणेन कर्मणा ॥

लाला जी इन सभी मापदण्डों पर अपने जीवन में सदा खरे उतरे । वे त्यागी थे, शीलवान थे, गुणवान थे तथा कर्मठ थे । उनके संपर्क में आने वाला प्रत्येक व्यक्ति उनसे प्रभावित हुआ और अपने जीवन को सुगंधित, सुवासित तथा सुपुष्पित करने में सफल हुआ । पं० देवव्रत धर्मेन्दु तथा पं० रामेश्वराचार्य शास्त्री ने उनके इन गुणों की भूरि भूरि प्रशंसा करते हुए कहा कि उनके सम्पर्क में आकर उनका जीवन कुन्दन बन गया । लाला जी का देहावसान 23 दिसम्बर 1973 को नई दिल्ली के सफदरजंग अस्पताल में हुआ । अन्त समय तक वे वेद-प्रकाशन के कार्य में संलग्न थे । ऐसे धैर्यशाली पुरुषों की आज महती आवश्यकता है । उनका यशः शरीर आज भी हमारे साथ है और हमें कर्त्तव्य पर डटे रहने की प्रेरणा देता है । हम उनका सश्रद्ध स्मरण करते हैं–

विद्याविलास मनसो धृतिशील शिक्षाः सत्यव्रताः रहित मानमलापहाराः ।
संसार दुःखदलनेन सुभूषिता ये धन्याः विहित कर्मोपकाराः ॥

www.thearyasamaj.org

भर्गप्राप्ति की साधना

स्व० पं० वीरसेन वेदश्रमी, वेदविज्ञानाचार्य

[सुप्रसिद्ध लेखक, विद्वान्, व्याख्याता, वेद प्रचारक एंव वेद तथा यज्ञ विधान के अद्वितीय विद्वान् पं० वीरसेन वेदश्रमी का जन्म मार्ग शीर्ष शुक्ला १३ सं १९६५ वि० तदनुसार ५ दिसम्बर १९०८ को देवास, मध्यप्रदेश में हुआ । आपने गुरुकुल वृन्दावन से आयुर्वेद शिरोमणि की उपाधि प्राप्त की । आपने यजुर्वेद और सामवेद को कण्ठस्थ किया और विलोमपाठ तथा विकृति पाठों का आपने गहन अध्ययन किया था। आपने यज्ञों के वैज्ञानिक लाभों पर तथा पर्यावरण पर उसके प्रभाव पर अनुसन्धान किया । आपने अनेक पुस्तकें लिखीं । आपका निधन २२ दिसम्बर १९८७ को हुआ । आर्यसमाज स्थापना शताब्दी समारोह के अवसर पर आर्य उप प्रतिनिधि सभा मुरादाबाद द्वारा प्रकाशित स्मारिका से उद्धृत प्रस्तुत लेख में 'ओ३म्' की महत्ता का प्रतिपादन किया गया है । –सम्पादक]

ओम् त्रिमात्रिक है । अ, उ, और म् ये ओम् की तीन मात्रायें हैं । इन तीन मात्राओं से तीन प्रकार का भर्ग-तेज-इस अनन्त ब्रह्माण्ड और उससे भी परे व्याप्त है । वह तीन प्रकार का भर्ग-भूः, भुवः और स्वः है ।

उसी ओम् के भूः भर्ग से सब जड़ एवं चेतन में प्राण, जीवन-स्पन्दन, अस्तित्व की स्थिति है । भुवः भर्ग से जगत् में दुःखों की निवृत्ति, गति, उन्नति, नवरूप-लावण्य प्रतीत होता है और स्वः भर्ग से स्व में अपने में तथा प्रत्येक पिण्ड-पिण्ड में आनन्द भरा हुआ है । चेतन में आनन्द की अनुभूति, आनन्द में स्थिति एवं आनन्द की उपलब्धि होती है । ये तीनों भर्ग परमात्मा के परम भर्ग हैं ।

ये तीनों भर्ग परम ऐश्वर्य रूप हैं । ऐश्वर्य के जनक, उत्पत्ति कर्त्ता, प्रसव कर्त्ता भी हैं । ये उस परमदेव ओम् से उत्पन्न, निर्झारित, प्रसावित होकर निरन्तर व्याप्त रहते हैं । इसलिये ओम् परमात्मा को वेद ने सविता कहा है । ओम् के अर्थात् सविता के उस ऐश्वर्यमय भर्ग को हमें चिन्तन, ध्यान व धारणा के माध्यम से धारण करना चाहिए। ध्यान के माध्यम से जब हम धारण करना चाहेंगे तो प्रथम स्थिति वरण की ही होगी । विना वरण किये ध्यान नहीं होगा व धारण ही होगा ।

वरणीय भर्ग को धारण करने के लिए हमें अपने अन्दर अत्यन्त श्रद्धा, विनम्रता, निरभिमानता पूर्ण समर्पण भाव, अनन्य प्रीति, सर्वतः परिपूर्ण प्रेमानन्द की स्थिति में जाना होगा और ओ३म् स्वरूप परमात्मा का-सविता देव का वरण करना होगा ।

"योऽसावादित्ये पुरुषः सोऽसावहम्- ओ३म् खं ब्रह्म (यजु०

www.thearyasamaj.org

४०।१७) इस मन्त्र पद के रहस्य को जानना होगा । अर्थात् यह जो प्राण वा सूर्यमण्डल में पूर्ण परमात्मा है, वह परोक्ष रूप में उसके तुल्य व्यापक, सबसे गुण-कर्म और स्वभाव करके अधिक हूं, सबका रक्षक जो मैं हूं ? उसका नाम ओम् ऐसा जानो !–इस मन्त्र द्वारा यह जो परमात्मा का, उस ओम् का साक्षात् संभाषण है उसको ? सावित्री मण्डल से मन्त्र एवं उसके अर्थमाध्यम से अन्तःकरण से सुनो ।

इस श्रुति की ध्वनि अहर्निश हो रही है । उस पर एकाग्रता पूर्वक ध्यान करो । ध्यान करने से ज्ञान ज्योति प्रकट होगी । ज्ञान ज्योति की स्थिति में–"**देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तम्** (यजु० ३५।१४) परम श्रेष्ठ उत्तरोत्तर ज्योतियां जो देवं देवभा हैं, वे प्रकट होंगी ये ही परमात्मा भर्ग हैं सवित मण्डल से ये भर्ग रूपी दिव्य ज्योतियां पृथ्वी मण्डल पर भी आ रही है । पृथिवी इन्हें धारण करती है । पृथिवी सविता के भर्ग से गर्भवती होकर महान् ऐश्वर्य उत्पन्न कर रही है । उस गर्भ को हम सब भी धारण, आकर्षित केंद्रित करें, तो हम भी ऐश्वर्य के विकीर्ण करने वाले, विकसित करने वाले हो जावेंगे क्योंकि उस अवस्था में सविता देव हममें–"**धियो यो नः प्रचोदयात्**" कराते हैं ।"

जिस प्रकार सवित-मण्डल से प्रकाश एवं ज्ञान की किरणें एवं स्फुरण हमारे पास आती हैं उसी प्रकार वहीं से दिव्य, अमृतमय प्राणों का भी प्रवाह हमारे पास आ रहा है । उस प्राण की धारा का ध्यान से स्व प्राण में आकर्षण एवं धारण करने से हममें परमात्मा का, सविता देव का, उस ओम् का भूः रूपी भर्ग धारण होगा । जिस प्रकार तालाब, कुंवा, बावड़ी आदि में प्रवेश कर ऊपर के पत्ते व काई आदि को हटाने पर स्वच्छ जल प्राप्त हो जाता है, उसी प्रकार चित्त की वृत्ति एवं वासना रूपी संस्कारों के हटाने से सवित-मण्डल से आगत अमृतमय प्राणों के प्रवाह को हम प्राप्त कर सकते हैं ।

भूः प्राण रूपी भर्ग के धारण से स्वतः अपान क्रिया उत्पन्न होगी । अर्थात् दुःख, रोगादिक अपनयन, निवृत्ति होगी । यही भुवः भर्ग का धारण है । भुवः भर्ग से दुःख नष्ट होते हैं । अपान की क्रिया होने से, अर्थात् दुःखों की निवृत्ति होने से तीसरी स्थिति व्यान प्राणों की प्राप्ति होगी, जिससे स्वः अर्थात् आनन्द भर्ग की प्राप्ति होगी । इस प्रकार ओ३म् के भर्ग से प्राण, अपान एवं व्यान रूपी वर्ग का प्रवेश होने से जीवन में भूः-र्भुवः-स्वः के भर्ग से युक्त हो जाता है ।

उसी भर्ग से जहां प्राण का प्रवाह चल रहा है, वहां ज्ञान का प्रवाह भी उसमें विद्यमान है । तीनों भर्गों का तीनों लोकों से सम्बन्ध है । भूः व्याहृति का

(शेष पृष्ठ 14 पर)

www.thearyasamaj.org

वैदिक संस्कार

–स्व० डॉ० सच्चिदानन्द शास्त्री

[आर्य जगत् के विद्वान्, प्रवक्ता, नेता, पत्रकार, सम्पादक तथा स्वतंत्रता सेनानी डॉ० सच्चिदानन्द शास्त्री का जन्म उत्तरप्रदेश के हरदोई जनपद के सुरसा नामक ग्राम में 25 अप्रैल सन 1925 को हुआ । आपकी शिक्षा दीक्षा गुरुकुल महाविद्यालय, ज्वालापुर में हुई । आप उत्तरप्रदेश आर्य प्रतिनिधिसभा के मन्त्री रहे तथा कालान्तर में सार्वदेशिक सभा के भी मन्त्री बने । आपकी वेदप्रचार के साथ साथ स्वाध्याय, चिन्तन, मनन व लेखन में भी रुचि बनी रही । आपने आगरा विश्वविद्यालय से एम०ए० तथा पी०एच०डी० की उपाधि प्राप्त की । आपने अनेक ग्रन्थों का प्रण्यन तथा सम्पादन किया । आपका निधन लखनऊ में 30 अक्तूबर 2013 को हुआ । आपके प्रति विनत श्रद्धाञ्जलि । –सम्पादक]

सम्प्रति भारत देश में प्राचीन कर्त्तव्याकर्त्तव्य, चलन-विचार तथा अनाचार पर प्रायः सर्वत्र असन्तोष व अश्रद्धा फैल चुकी है । इसका कारण है विदेशी दासता तथा वर्तमान शिक्षा पद्धति । इस विषैली गैस ने भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति को बहुत हानि पहुंचाई है । फिर भी यहां के ब्राह्मणों ने हिन्दू समाज को कर्त्तव्य एवं ज्ञान की ओर प्रेरित किया, चाहे वे स्वयं अज्ञान के गड्ढे में गिरे हुए थे–फिर भी जैसा भी उनमें ज्ञान था, उससे धर्म की लकीर पीटकर हिन्दू-समाज को बचाने में कर्त्तव्य करते रहे हैं । यद्यपि कहने को अभी भी संस्कार भी सब वही हैं और धर्म विचार भी वही हैं, लेकिन वास्तविकता से सब विपरीत अर्थात् अन्तःसार शून्य है । काठ का घोड़ा घर पर भी बेकार और काठ के तलवार घुमाना जानने पर जैसे निरर्थक है, उसी प्रकार आज हमारी पद्धतियां भी हैं । इनके सुधार किये बिना देश की दशा नहीं सुधरेगी । संस्कार से तो घटिया लोहा भी अच्छी घड़ियों में लगाकर बहुमूल्य हो जाता है । फिर मानवमात्र का संस्कार तो क्या नहीं कर सकता ?

संस्कार का अर्थ है आत्मा में अनुभव से उत्पन्न स्मृति को उद्बुद्ध करना अथवा किसी भी वस्तु को शुद्ध और पवित्र कर देना । हम देखते हैं कि वैद्य लोग भयानक विष का संस्कार कर अमृत-तुल्य औषधि निर्माण कर लेते हैं । इस प्रकार संस्कार की चाह तो प्राणी में अवश्य रहती है । फिर भी कहना होगा कि आज यदि हिन्दुत्व कुछ शेष हैं तो नाम मात्र के संस्कारों का ही यही परिणाम है ।

आज भी भारतीय परम्पराओं में संस्कारों के जो कुछ भाग शेष हैं, उनमें महिलाओं का बड़ा योग है । उनमें श्रद्धा के भाव अधिक है । बहुत सी स्त्रियां नये युग के फैशन को पसन्द नहीं करती हैं । अतः वे अपने निश्चय

www.thearyasamaj.org

पर अटल ही रहती हैं । इसमें समाज सदा उनके प्रति श्रद्धावनत है ।

हिन्दू धर्म समाज के समस्त धर्मों से अधिक गम्भीर और संस्कारित है । संसार के अन्य धर्मों की दीक्षा मनुष्य को ज्ञान वृद्धि के साथ-साथ होती है, पर हिन्दू धर्म में ऐसा नहीं है । यहां तो बच्चे को जन्मते ही संस्कारों का प्रचलन प्रारम्भ हो जाता है, और तभी से ऋषियों द्वारा प्रतिपादित 16 संस्कारों का विधान आता है ।

प्रत्येक समाज को आचार की आवश्यकता सदा रहती है । अतएव यह ज्ञान आवश्यक है । हिन्दुत्व (आर्यत्व) निदर्शक 16 संस्कारों में मात्र हिन्दुत्व बोधक ही गौरव रखते है । संस्कारों में प्रधानतया गाम्भीर्य-धर्म भावना, शास्त्र विश्वास और पवित्रता की बुद्धि चाहिए । तभी संस्कार के प्रयोग से यह पवित्रता आयेगी । इस कारण सम्पूर्ण हिन्दू मात्र को उदार और पवित्र भावना द्वारा संस्कार के समय वेद मंत्रों का प्रयोग बुद्धिपूर्वक करना चाहिए । समाज में संस्कारों के प्रति अश्रद्धा तथा अपेक्षित भावों को दूर किया जाना अपेक्षित है । ●

(पृष्ठ 12 का शेष)

सम्बन्ध पृथिवी से है । पृथिवी में उसका भर्ग अग्नि है । उस अग्नि का ज्ञान-विज्ञान ऋग्वेद है । भुवः का सम्बन्ध अन्तरिक्ष से है । अन्तरिक्ष में भुवः व्याहृति का भर्ग वायु रूप से है । वायु का ज्ञान-विज्ञान यजुर्वेद है और स्वः व्याहृति का सम्बन्ध द्युलोक से है । द्युलोक में स्वः व्याहृति का भर्ग आदित्य रूप से है । आदित्य का ज्ञान-विज्ञान सामवेद है । यही त्रयी विद्यारूपी भर्ग त्रिलोकी में व्याप्त है । अतः ओ३म् के सवित् मण्डल से ज्ञान की प्राप्ति ध्यान करने से होती हैं । धियो योनः प्रचोदयात्–यह उसी सवित मण्डल से गायत्री के द्वारा ध्यान करने से प्राप्त होता है ।

अतः ओ३म् की साधना करने के लिए उसे तीन व्याहृतियों के साथ गायत्री मन्त्र द्वारा वरण एवं धारण करने का प्रयत्न करने से महान् लाभ होता है । ●

आर्य साहित्यसेवी विश्वकोश

दस खण्डों में प्रस्तावित 'आर्यसाहित्य सेवी विश्वकोश' का लेखन कार्य प्रगति पर है । सुविज्ञ पाठकों से विनम्र निवेदन है कि यदि उन्होंने अपना परिचय, चित्र तथा लेखन-कार्य का विवरण अभी तक नहीं भेजा है, तो कृपया अपना परिचय शीघ्र भेजें जिसमें नाम, चित्र, माता-पिता का नाम, पति/पत्नी का नाम, जन्मस्थान और जन्म तिथि (निधन स्थान और निधन तिथि केवल दिवंगत के लिए), जीवन के उल्लेखनीय प्रसंग, लेखन कार्य का विस्तृत परिचय आदि कृपया शीघ्र भेजें ।

–सम्पादक

www.thearyasamaj.org

स्व० पं० प्रकाशवीर शास्त्री

जन्मतिथि 31 दिसम्बर पर विशेष संस्मरण

धर्म ने पण्डित बनाया, राजनीति ने हरिजन

सन् 1970 की बात है। आर्यनेता संसदसदस्य श्री पं० प्रकाशवीर शास्त्री 1, कैनिंग लेन, नई दिल्ली में रहते थे।

एक दिन एक आर्यसमाजी विद्वान् शास्त्री जी से मिलने आये। शास्त्री जी ने परिचय कराया–'ये पण्डित नरदेव स्नातक हैं–आर्यसमाज के पण्डित और कांग्रेस के 'हरिजन'।

स्नातक जी शास्त्री के सहपाठी व परम मित्र थे। दोनों मिले तो जोरदार ठहाकों में लॉन गूंज उठा।

आर्यसमाज–के पण्डित और कांग्रेस के 'हरिजन' ये शब्द सबके कानों में गूंजते रहे। 'आखिर शास्त्री जी आपके इन शब्दों का अर्थ क्या है?'–पूछ ही लिया।

शास्त्री जी बोले हम दोनों ज्वालापुर महाविद्यालय में साथ-साथ पढ़े। साथ-साथ खाते, साथ-साथ खेलते थे। हमें पता ही नहीं था कि नरदेव जी किस जाति के हैं। हमारी एक ही जाति थी-छात्र।

नरदेव जी स्नातक हुए तो आर्यसमाज के क्षेत्र में वे 'पण्डित माने गये। पण्डित नरदेव स्नातक विवाह कराने जाते, तो कहीं भाषण देते, इससे चारों ओर धूम मचने लगी। आर्यसमाज ने नरदेव जी को पण्डित बना दिया।

विधान सभा के चुनाव आए तो कांग्रेस के कुछ लोगों ने नरदेव जी को प्रेरित किया। उ० प्र० की सुरक्षित सीट से उनका आवेदन दाखिल कराया गया। नरदेव जी ने मजिस्ट्रेट के समक्ष शपथ-पत्र दाखिल किया–'मैं नरदेव स्नातक जन्म से हरिजन हूं।'

इसलिए मैं कहता हूं कि वैदिक धर्म ने आर्यसमाज में इन्हें पण्डित बनाया और राजनीति से, कांग्रेस ने 'हरिजन'।

नरदेव जी शास्त्री जी की बात सुनकर स्तब्ध थे। लग रहा था जैसे शास्त्री जी ने पूरी राजनीति पर ही तेज-तर्रार व्यंग्य किया है–यह। ●

[तपोभूमि सितम्बर 1987 से साभार]

युवकों को उद्बोधन्–

आओ आओ आगे आओ, इन दीवानों की टोली में।
अपने प्राणों की भीख भरो, भारत माता की झोली में॥
सौगन्ध उन्हीं की है तुमको, जो उठती हुई जवानी में।
अन्याय मिटाने को जूझे, जेलों में, काले पानी में॥

–कविवर छैलबिहारी दीक्षित 'कंटक'

www.thearyasamaj.org

जन्मशती : स्मरण - 8 डॉ० देवेन्द्रनाथ शास्त्री

डॉ० देवेन्द्रनाथ शास्त्री का जन्म अविभाजित भारत के पश्चिमी पंजाब (अब पाकिस्तान) के जेहलम जनपद के 'आडा' नामक ग्राम में 11 अक्तूबर सन् 1913 को हुआ था । आपके पिता पं० मानिकचन्द आर्य कट्टर आर्यसमाजी थे । आपकी आरम्भिक शिक्षा गुरुकुल रायकोट (लुधियाना) में हुई । आपने शास्त्री, एम०ए० (हिन्दी एवं संस्कृत) की उपाधियां प्राप्त की । आपके लेख तथा हिन्दी एवं संस्कृत कविताएं आर्य, आर्योदय, आर्य मर्यादा, अलंकार आदि आर्य पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं । आपने सन् 1990 में "शुक्ल या जुय सूक्ति विमर्श:" विषय का संस्कृत शोध-प्रबन्ध लिखकर दयानन्द शोधपीठ, पंजाब विश्वविद्यालय से पी-एच० डी० की उपाधि ग्रहण की थी । आपने कन्या गुरुकुल नरेला (दिल्ली) में शिक्षण कार्य किया ।

जन्मशती : स्मरण - 9 अन्ने केशवार्य शास्त्री

श्री अन्ने केशवार्य शास्त्री का जन्म आन्ध्रप्रदेश के कृष्णा जनपद के मुद्धनूरू नामक ग्राम में 16 अक्तूबर सन् 1913 को हुआ था । आपके पिता श्री नागय्या कवि तथा पण्डित थे । तथा नूजवीडु व चल्लपल्लि रियासतों के राजाओं से सम्मानित हुए थे । आपकी माता का नाम श्रीमती पुन्नम्मा था ।

सन् 1026 में जब आप स्वग्राम की हिन्दी पाठशाला में पढ़ रहे थे, वहीं आपको स्वामी श्रद्धानन्द के बलिदान का समाचार मिला । बाद में आपको महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती, आर्यसमाज व सत्यार्थप्रकाश के सम्बन्ध में जानकारी मिली । संयोगवश आपका परचिय पं० पी० एस० आचार्य से हुआ, और उनके आश्रम में रहकर वैदिक-कर्म-काण्ड सीखे । सन् 1930 में, राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेने पर वेल्लारी कैम्प जेल में एक मास रहे । सन् 1932 में पुन: सत्याग्रह में भाग लेकर 13 मास की जेल यातनाएं भुगती । पश्चात् आपने बिठूर के ऋषिकुल में अध्ययन किया । सन् 1938 में हैदराबाद आर्य सत्याग्रह में भाग लेकर जेल गये । सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से प्रचारक बन कर वारंगल, खम्भम्, करीमनगर में प्रचार कार्य किया । आपने संस्कृत पाठशालायें भी चलाई । हिन्दी की परीक्षाएं उत्तीर्ण कर हिन्दी अध्यापक बने । तेलगु भाषा सिखकर केशव स्मारक विद्यालय, हैदराबाद में तेलगु अध्यापक बने । आपने महर्षि दयानन्द सरस्वती के कुछ ग्रन्थों का तेलगु में अनुवाद किया, जिनमें-व्यवहारभानु, आर्याभिविनय:, संस्कृत वाक्य प्रबोध, शिक्षापत्रीध्वान्तनिवारण, गोकरुणानिधि:, सत्यधर्म विचार, यजुर्वेद भाष्य प्रमुख हैं । इसी प्रकार ईशोपनिषद्, कठोपनिषद, माण्डूक्योपनिषद पर काव्य रचना की । दश-नियमों की व्याख्या तथा खण्डन-मण्डनात्मक कई लघु पुस्तकें भी लिखीं । आपका निधन सन् 1973 में हुआ । ●

www.thearyasamaj.org

गतांक से आगे–

महर्षि का ईश्वर प्रत्यक्ष

–स्व० आचार्य विश्वदेव शास्त्री

कुछ शास्त्रीय वाक्यों को लेकर भी ईश्वर प्रत्यक्ष का खण्डन किया जाता है । यथा–

न सन्दृशे तिष्ठति रूपमस्य न चक्षुषा पश्यति कश्चनैनम्।
हृदा मनीषा मनसाभिक्लृप्तो ······ कठ 6/9
नैव वाचा न मनसा प्राप्तुं शक्यो न चक्षुषा । कठ 6/12
न चक्षुषा गृह्यते नापि वाचा, नान्यैर्देवैस्तपसा कर्मणा वा । मुण्डक 3/1/8
न तत्र चक्षुर्गच्छति न वाग्गच्छति नो मनो० ।
तलवकारोपनिषद् 1/3

इत्यादि स्थलों में स्पष्टतः आंखों के द्वारा ईश्वर के दर्शन का तथा मन और वाणी से ईश्वर के ज्ञान का निषेध किया है ।

वस्तुतः इन स्थलों पर अविद्यादि दोषों के मल से उपहत मन, बाह्य रूपादि में आसक्त चक्षुओं को ही लेकर निषेध परक व्याख्यान किया है कि इनसे ईश्वर का प्रत्यक्ष नहीं हो सकता । अर्थात् जो आंखें सांसारिक पदार्थों के रूप दर्शन में आसक्त है उन आंखों से ईश्वर के दर्शन नहीं हो सकते । अथवा ईश्वर निराकार है अतः उसके दर्शन इन आंखों से नहीं हो सकते ।

यों तो जीवात्मा प्रतिदिन सुषुप्ति में ईश्वर का अनुभव करता है, पर प्रत्यक्ष वहां नहीं होता । यथा–

मनो ह वाव यजमानः इष्टफलमेवोदानः ।
स एनं यजमानमहरहः ब्रह्म गमयति ॥ प्रश्नो० 4/4
हृदयं चेतनास्थानमुक्तं देहिनाम् ।
तमोऽभिभूते तस्मिंस्तु निद्रा विशति देहिनाम् ॥
सुश्रुत शरीरस्थान

समाधि और सुषुप्ति में जीवात्मा ईश्वर के सुख=सामीप्य का अनुभव करता है । अन्तर केवल इतना है कि सुषुप्ति में तम सत्व और रज को आवृत कर दबा लेता है । अतः ईश्वर का सुषुप्ति में प्रत्यक्ष नहीं होता ।

समाधि में सत्व प्रधान होता है और वह 'रजस्' और 'तमस्' को अभिभूत कर लेता है, अतः ईश्वर का प्रत्यक्ष होता है । प्रमाण के लिए देखें–तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम् । तब साधक द्रष्टा का अपने स्वरूप (आत्मा) में अवस्थान होता है । (क्रमशः)

www.thearyasamaj.org

विद्वानों के सत्परामर्श–

● आपकी सतत तपस्या और वैदिक विचारों की आचरित वाणी (लेखनी) से आर्यजगत् की अनवरत सेवा हो रही है और राष्ट्रभाषा हिन्दी संसार को सहज शुद्ध बोध कराने में संलग्न है । इससे हम जैसे जीर्णशीर्ण काया को आयु की शिथिलता से उबरने में बल मिल रहा है । 86 वीं वर्ष में चलती जिन्दगी में लग उठा है कि शरीर को ढो रहा हूं । आप तो इस आयु से अधिक आयु में चलते हुए सक्रिय समाज में संलग्न हैं । लघु काया में प्रकाशित होने वाली ओ३म् सुप्रभा मासिक सूर्यप्रभा बनकर उदय हो रही है । हर महीने वैदिक ज्योति से पाठकों को अनुप्राणित कर रही है । सितम्बर 2013 के अंक में स्वर्गीय वैदिक विद्वान् एकादशतीर्थ डॉ० हरिदत्त शास्त्री द्वारा लिखा आलेख शतपथ ब्राह्मण में जीवनदर्शन पढ़ने को मिला, इसे अभी पूरा तो नहीं पढ़ पाया फिर भी उसे धीमी गति से पढ़ रहा हूं । आचार्य शास्त्री जी के व्याख्यान भी सुनने का सौभाग्य प्राप्त किया और उनसे संस्कृत में एम० ए० करने के समय में समीप बैठकर पढ़ने का सौभाग्य भी मिला है । आप ऐसी महाविभूतियों की ज्ञाननिधि को निरन्तर बांटने में लगे हैं जिन्हें आर्यजगत् भी भूलता जा रहा है । आपकी साधना सतत अमृत वर्षण करती रहे । प्रभु से प्रार्थना है कि आप इसी प्रकार शताधिक आयु को स्वस्थ सक्रिय जीते हुए मानव समाज का मार्गदर्शन करते रहें ।

–लखनसिंह भदौरिया
भोजपुरा, मैनपुरी-205001

● आपके द्वारा प्रेषित 'ओ३म् सुप्रभा' के अंक निरन्तर मिलते रहते हैं- हार्दिक धन्यवाद । वैदिक सभ्यता, संस्कृति तथा राष्ट्रीय एकता की पोषक इस मासिक पत्रिका की सारी सामग्री स्तरीय, पठनीय, चिन्तनीय, मननीय एवं आचरणीय होती है । 'स्मरण-अनुकरण-नमन्' के अन्तर्गत दिये गये लेख अत्यधिक महत्वपूर्ण एवं दुर्लभ होते हैं । निःसन्देह ये पत्रिका के अमूल्य रत्न हैं और इनसे पत्रिका संग्रहणीय बन पड़ती है । आपकी कर्मठता एवं वैदुष्यपूर्ण सम्पादन-दृष्टि का मैं प्रशंसक हूं । पत्रिका गागर में सागर के समान है । श्रेष्ठ सम्पादन के लिए हार्दिक बधाई एवं अभिनन्दन ।

–प्रो० (डॉ०) सुन्दरलाल कथूरिया
बी-3/79, जनकपुरी, नई दिल्ली 110058

● 'ओ३म सुप्रभा' है प्रीतियुक्त मंगलकारिणी पत्रिका,
जो रख रही है एक-एक सौभाग्योदय की इष्टिका ।
आर्यता का भवन बनेगा, ऋषि स्वप्न होंगे साकार,
प्रियज्ञान के वर्षा से यों लेगी सात्विकता अवतार ॥

शुभ कर्मों के रक्षक "ओ३म्" की कृपा से 'द्यु' और 'पृथ्वी' लोक इस पत्रिका के यश के साधन बनें, यही शुभ कामना है ।

–प्रियवीर हेमाड्ना 7503070674
318, विपिन गार्डन, नई दिल्ली-110059

www.thearyasamaj.org

पुस्तक समीक्षा –

दयानन्द सागर (महाकाव्य)

रचयिता-श्री भगवानदास, प्रकाशक-आर्यसमाज नांगलराया, आर्यसमाज मार्ग, नांगलराया, नई दिल्ली-110046 मूल्य-200 रु० प्रथम संस्करण-अक्तूबर 2013

श्री भगवानदास आर्य वैदिक सिद्धान्तों तथा मन्तव्यों के अनन्य पोषक, एवं प्रचारक हैं। आपको ये संस्कार बाल्यकाल से ही मिले जो सत्यार्थप्रकाश के अध्ययन के पश्चात् दृढ़तर होते चले गए। आप हिन्दी एवं साहित्य के अधिकारी विद्वान् हैं। आपमें काव्य रचना की नैसर्गिक प्रतिभा है। आप दीर्घकाल तक 'पालिका समाचार' के सम्पादक रहे हैं। आपने महर्षि दयानन्द सरस्वती की यह काव्यात्मक जीवन गाथा लिखकर, वैदिक साहित्य सम्पदा की श्रीवृद्धि की है। आपके द्वारा रचित 'दयानन्द सागर' महाकाव्य आपके भावों तथा विचारों की सहज अभिव्यक्ति है। इसमें आपकी भावनाएं सहज सी प्रस्फुटित हुई हैं। इस महाकाव्य की भाषा सरल एवं सुबोध है। इसके सभी पद गेय है। इससे पहले भी आपने अनेक कविताएं तथा गीत लिखे हैं जो आकाशवाणी पर प्रसारित हुए। हमें विश्वास है कि इस महाकाव्य को सर्वत्र प्रशंसा मिलेगी। इसे पढ़कर तथा गाकर सुधी आर्यजन आनन्द-रस का आस्वादन करेंगे। इस महाकाव्य में महर्षि दयानन्द सरस्वती के सम्पूर्ण जीवन का दिग्दर्शन कराया गया है। साथ ही उनके सिद्धान्तों तथा मन्तव्यों का भी सुस्पष्ट विवरण दिया गया है।

महर्षि दयानन्द सारस्वती के जीवन के विभिन्न सोपानों को इस महाकाव्य में प्रस्तुत किया गया है। उनके जीवन से सम्बन्धित चित्रों के प्रकाशन से यह कृति और भी महत्वपूर्ण बन गई है। हम श्री भगवानदास जी के लिए दीर्घायु तथा स्वास्थ्य की कामना करते हैं तथा आशा करते हैं कि ऐसे अनेक महाकाव्य उनकी लेखनी से रचे जाएंगे।

देव काव्य-धारा

लेखक-श्री देवराज आर्यमित्र, प्रकाशक-श्री राकेश आर्य WZ-428, हरिनगर, नानकपुरा नई दिल्ली-110064

श्री देवराज 'आर्यमित्र' आर्यसमाज की कर्मठ विभूति हैं। आपके लेख और कविताएं विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में नियमित रूप से प्रकाशित होती रही हैं। आपने आठ लघु पुस्तकों का प्रणयन किया है। आपके लेख में आर्यत्व का सन्देश है। आपके वाक्य छोटे, पर चुटीले होते हैं, जो उद्भेदन करते हैं। इस लघु पुस्तिका में आपके विचार संकलित है समय-समय पर सामाजिक हित तथा आत्मकल्याण के लिए लिखा है उसी को पुस्तक रूप में प्रस्तुत किया है। यह पुस्तक पठनीय और संग्रहीय है।

www.thearyasamaj.org

गतांक से आगे–

आर्यसमाज का दायित्व

–स्व० युद्धवीर

क्या आर्यसमाज यह सब या इनमें से कुछ कार्य कर रहा है ? आर्यसमाज को और विशेषकर सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा को इस प्रश्न पर गम्भीरता पूर्वक विचार करना चाहिए। समाज सुधार के इन कार्यक्रमों के अतिरिक्त आर्यसमाज स्थान-स्थान पर आई मुसीबतों के समय सदा सहायता कार्य में सर्वाग्र रहा है। मालाबार में मोपला विद्रोह हुआ तो आर्यसमाज के स्वयं सेवक सर्वप्रथम वहां पहुंचे। कोयटा में भूकंप आया, बिहार में भूकंप आया, आर्यसमाज ने इन दोनों स्थानों पर पहुंच कर इन भूकम्पों में बेघर हुए और घायलों को चाहे वह हिन्दू थे या मुसलमान सब की सेवा की और उन्हें हर प्रकार की सहायता पहुंचाई। अंग्रेजों के शासन में जब बंगाल में अंग्रेजों ने जानबूझ कर वहां के उन दो जिलों में, जहां भारत छोड़ो आन्दोलन में वहां के लोगों ने अंग्रेजों के विरुद्ध बहुत बड़ा संघर्ष किया था, भीषण अकाल उत्पन्न कर दिया और इस अकाल में लाखों लोग मृत्यु का शिकार हुए तब भी आर्यसमाज ही एक ऐसी संस्था थी जिसके स्वयं सेवकों ने हिन्दू और मुसलमान दोनों को सहायता पहुंचाई। 1946 में पूर्व बंगाल के नोवाखली में साम्प्रदायिक दंगे हुए तो आर्यसमाज के स्वयं सेवक अपनी जान की बाजी लगाकर सहायता कार्य के लिए वहां पहुंचे। भारत में कहीं भी किसी प्रकार की कोई भी मुसीबत आए आर्यसमाज सहायता कार्य में सर्वदा सर्वाग्र रहा है और सहायता क्रय करते हुए आर्यसमाज ने केवल मानवता के दृष्टिकोण से ही सहायता की है। कभी यह नहीं देखा कि जिनकी वह सहायता कर रहा है वह किस धर्म को मानने वाले हैं।

किन्तु आज मुझे बहुत खेद से लिखना पड़ता है कि आर्यसमाज और इसकी प्रतिनिधि संस्था सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा इन सभी समाज सेवी, धर्म सुधार और सहायता कार्यों को भूलकर वह कार्य कर रही है जिनका महर्षि दयानन्द जी सरस्वती ने खण्डन किया था।

प्रकाशक-मुद्रक-स्वामी-मूलचन्द गुप्त द्वारा सम्पादित, तथा वैदिक प्रेस, 995/51, गली नं०17, कैलाशनगर, दिल्ली-31 (फोन-22081646) से मुद्रित कराकर, ओम् प्रतिष्ठान, कुसुमालय, बी-1/27, रघुनगर, पंखा रोड, नई दिल्ली- 45, से प्रकाशित किया। न्यायक्षेत्र–दिल्ली।